Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 6 | ISSUE : 2 | FEBRUARY 2020

प्रो. केशवराम शर्मा रचित 'हिमाचल वैभवम्' काव्य में अलंकार

डॉ. बलवंत सिंह चौहान [1]

[1] सह आचार्य (संस्कृत), डॉ. बी.आर.ए. राजकीय, महाविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.)

ABSTRACT:

प्रो. केशवराम शर्मा विरचित 'हिमाचल वैभवम्' नामक नौ सर्गीय काव्य 465 पद्यों में निबद्ध है। मान्यता प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित ऐतिहासिक घटनाओं पर आधृत उक्त काव्य के प्रथम सर्ग में हिमाचल प्रदेश के पर्वतों, तरुओं, मेघमण्डलों, झरनों, शीतल हवाओं व षड्ऋतुओं का मनोहारी चित्रण मिलता ह। द्वितीय सर्ग में नीलकण्ठ भगवान् शंकर, उनकी अर्द्धांगिनी पार्वती, कार्तिकेय, जमदग्नि ऋषि व भगवान परशुराम आदि पात्रों का उदात्त चरित्र, तृतीय सर्ग में शुकदेव मुनि, कपिल मुनि, वशिष्ठ ऋषि, लोमश ऋषि, पराशर ऋषि आदि का, चतुर्थ सर्ग में माता नयना देवी, भगवती जगदम्बा मन्दिर व धौलीधार आदि पवित्र तीर्थस्थलों का, पञ्चम सर्ग में माँ दुर्गा, भगवती कलिका माता व चामुण्डा माता आदि का, षष्ठ सर्ग में देवमण्डल द्वारा हिमाचल के प्रदेशवासियों को दिये गये आशीर्वादों का, सप्तम सर्ग में हिमाचल प्रदेश की महिमा का, अष्टम सर्ग में हिमाचल प्रदेश के लोगों के आचार–विचार, रहन–सहन व वेशभूषादि का व अन्तिम नवम सर्ग में पर्यावरण चेतना प्रभृति बिन्दुओं पर कविवर ने वर्णन किया है। कविवर शर्मा ने अपनी कृति की सौन्दर्यश्री में वृद्धि हेतु पदे–पदे अनेकविध अलंकारों का सुष्ठु प्रयोग किया है। कविवर का प्रिय अलंकार उत्प्रेक्षा अलंकार है, फिर भी काव्य में अनुपास, यमक, श्लेष, स्वभावोक्ति, उपमा, अर्थान्तरन्यास, व्यतिरेक, विभावना, उदात्त व भाविक प्रभृति अलंकारों का प्रयोग काव्य की सौन्दर्य में अभिवृद्धि करने में सराहनीय बन पड़ा है।

KEYWORDS:

विपुलश्रद्धान्विता, धर्मपथोपदेशाद्, स्वर्गसुधोपहारः, मयूरनिकरः, शम्भुप्रसादाय।

शोध उद्देश्य –

1. साहित्य के भावपक्ष और कलापक्ष का गूढ़ता से अध्ययन करने वाले शोधार्थियों और अध्येताओं को साहित्य सृजन के प्रति उन्मुख करना।
2. सहृदय अध्येताओं और शोधार्थियों के साहित्यश्री में वृद्धि करना और उन्हें नवसृजन हेतु प्रेरित करना।
3. पर्यावरण के प्राकृतिक उपादानों को सुरक्षित एवं संरक्षित रखने हेतु सहृदय पाठकों को जागरूक करना।
4. पाठकों और शोधार्थियों को भोगवादी संस्कृति के विरुद्ध तपोमय व त्यागमय जीवनशैली को अंगीकार करने हेतु प्रेषित करना।
5. सहृदय पाठकों को ऋषियों व मुनियों के उदात्त चरित्र से अवगत करवाकर लोकमंगल हेतु भारतीय संस्कृति की ओर लौटने का आह्वान करना।
6. काव्य में प्रयुक्त सौन्दर्य बोध से सहृदय अध्येताओं व पाठकों को अवगत करवाकर नवीन कृति के मूल्यांकन के ब्याज से नवसृजन को आत्मसात् करने का सुअवसर प्रदान करना।

प्रस्तावना –

मानव के शरीर की सौन्दर्य अभिवृद्धि करने वाले केयूरादि अलंकारों के समान काव्य के शरीरभूत शब्द और अर्थ के सौन्दर्य की वृद्धि करने वाले अनुप्रासादि अलंकारों का प्रयोग किया जाता है। आचार्य भामह ने काव्य के शोभादायक तत्त्व को अलंकार कहा है। उनके अनुसार 'रमणी का मुख सुन्दर होने पर भी अलंकार के अभाव में सुशोभित नहीं होता है।'

'न कान्तमपि निर्भूषं विभाति वनितामुखम्।'

आचार्य भामह, दण्डी और उद्भट आदि आचार्यों ने अलंकार को काव्य का अनिवार्य धर्म बताया है। वहीं अग्निपुराण के अनुसार 'अलंकारों से रहित होने पर कवितारूपी सरस्वती सिन्दूर से रहित विधवा के समान होती है'।

'अर्थालंकाररहिता विधवेव सरस्वती।'[1]

आचार्य मम्मट ने अलंकार को काव्यात्मभूत रस का उपस्कारक माना है।

उपकुर्वन्ति तं सन्तं येऽङ्गद्वारेण जातुचित्।
हारादिवदलंकारास्तेऽनुप्रासोपमादयः।।[2]

इस प्रकार प्रायः सभी आचार्यों ने अलकारों के महत्त्व को समझा और अपने–अपने ग्रन्थों में उनका गम्भीरतापूर्वक विवेचन किया। यही कारण ह कि प्रायः सभी अलंकारशास्त्रीय ग्रन्थों में अलंकारों का सविस्तार निरूपण प्राप्त होता है।

विषय–उपस्थापन –

प्रो. केशवराम विरचित 'हिमाचल वैभवम्' नामक काव्य में प्रयुक्त अलंकार कविवर की वाणी का ही अनुसरण करते हुए परिलक्षित हो रहे हैं। कविवर ने काव्य में अनेकविध अलंकारों का प्रयोग कर कवितारूपी कामिनी की श्रीवृद्धि करके चार चाँद लगा दिये हैं। काव्य में प्रयुक्त अलंकारो में से कतिपय अलंकारों की चर्चा करना चाहूँगा।

शब्दालंकार –

शब्दालंकार का वैशिष्ट्य यह है कि यदि वाक्य या पद में उसी अर्थ वाला दूसरा शब्द रखा जाए तो वहाँ शब्दालंकार नहीं रहता है अर्थात् जहाँ काव्य में शब्दों का चमत्कार होता है, वहाँ शब्दालंकार होते हैं। शब्दालंकारों में वक्रोक्ति, अनुप्रास, यमक आदि अलंकार परिगणित हैं।

1. अनुप्रास अलंकार –

लक्षण – 'अनुप्रासः शब्दसाम्यं वैषम्येऽपि स्वरस्य यत्।[3]

अर्थात् स्वर की विषमता होने पर भी शब्द अर्थात व्यञ्जन/वर्ण की समानता अनुप्रास अलंकार है। अनुप्रास अलंकार में व्यञ्जन की समानता पायी जाती है। स्वरों की समानता में कोई विचित्रता नहीं होती है।

'हिमाचल वैभवम्' काव्य के प्रथम सर्ग में हिमाचल की शोभा का रमणीय वर्णन करते हुए लिखते हैं कि पर्वतों में श्रेष्ठ हिमाचल की ऊँची धाराएँ अपने अनेक गुणों से बादलों से तुलना में समर्थ है।

श्यामा महातरुवनै र्विषमाश्च विष्वक्,
स्रोतोभिरम्बुविसृजश्च सिताः प्रपातैः।
अभ्युन्नता हिमधराधरधुर्यधारा,
धाराधरांस्तुलयितुं स्वगुणैः समर्थाः।।[4]

उपर्युक्त पद्य के प्रथम चरण में म्, व् और ष् वर्णों की आवृत्ति हुई है। द्वितीय चरण में स्, त् और प् वर्णों की आवृत्ति हुई है। तृतीय चरण में ध् और र् वर्णों की आवृत्ति हुई है। चतुर्थ चरण में ध्, र्, त् और स् वर्णों की आवृत्ति हुई है। अतः इस पद्य में अनुप्रास अलंकार है।

इसी प्रकार

पारं परं गिरिगुरो र्विभवस्य वेत्तुं,
शक्तोऽथवा क इव सन्नपि सूरिधूर्यः।
किं नाम तन्न यदमुष्य परं विचित्रं,
यद्वर्णने कविकला विकला न वा स्यात्।।[5]

यहाँ प्रथम चरण में प्, र्, ग्, र तथा व् वर्णों की आवृत्ति हुई है। इसी प्रकार द्वितीय

चरण में त्, व, स् और र् वर्णों की आवृत्ति हुई है। तृतीय चरण में न्, य् और र् वर्णों की आवृत्ति तथा चतुर्थ चरण में क्, व और ल् वर्णों की आवृत्ति हुई है। अतः यहाँ अनुप्रास अलंकार है। इसी प्रकार निम्न पद्य में भी अनुप्रास अलंकार की छटा द्रष्टव्य ह –

ज्वालाज्वलितमूलोऽद्रिः कदाचित् प्रपतेद् यदि।

धारयेयमितीवात्र महावीरः कृतालयः।।[6]

2. यमक अलंकार –

लक्षण – सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्यञ्जनसंहते।

क्रमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते।।[7]

अर्थात् अर्थ के होने पर भिन्न–भिन्न अर्थ वाले स्वरव्यंजन समूह की उसी क्रम में आवृत्ति होना यमक अलंकार कहलाता है।

काव्य के चतुर्थ सर्ग में कविवर कहते हैं कि ज्वाला देवी और ज्योतियों के मिलन के पावन पर्व पर ज्योतिरूप धारण करके स्वर्ग के देवगण स्वर्ग को छोड़कर हिमाचल में आते हैं।

महाशक्त्योः परिष्वङ्गपर्वणि ज्योतिषां मिषा।

वैहायसा विहायो वा विहायायान्ति मन्दिरे।।[8]

उपर्युक्त पद्य में विहाय पद की आवृत्ति हुई है। प्रथम 'विहाय' का अर्थ 'स्वर्ग' और द्वितीय 'विहाय'का अर्थ छोड़कर है। अतः यहाँ यमक अलंकार है। इसी प्रकार पञ्चम सर्ग में कविवर कहते हैं कि दुर्गम पर्वत पर 'दुर्गम' नामक शत्रुदैत्य का संहार करने के लिए मानो जगदम्बा ने दुर्गा का भीषण व कठोर शरीर धारण किया हो –

हन्तव्यो दुर्गमोऽराति र्दुर्गमे खलु पर्वते।

इति मत्वाम्बिका नूनं दुर्गाविग्रहमग्रहीत्।।

यहाँ 'दुर्गम' शब्द की आवृत्ति हुई है। प्रथम 'दुर्गम' का अर्थ दुर्गम पर्वत है और द्वितीय दुर्गम का अर्थ 'दुर्गम' नामक शत्रुदैत्य है। अतः उक्त पद्य में यमक अलंकार है।

अर्थालंकार –

जहाँ काव्य के अर्थों में चमत्कार पाया जाता है, वहाँ अर्थालंकार होता है। यदि शब्दों के स्थान पर उनके पर्यायवाची शब्द रखे जाएं तो भी अर्थ में चमत्कार बना रहा है। महाकाव्य में अनेकविध अर्थालंकारों का प्रयोग इस प्रकार मिलता है –

3. उत्प्रेक्षा अलंकार –

लक्षण – सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत्।[9]

अर्थात् प्रकृत (उपमेय) की सम (समान) अर्थात् उपमान के साथ सम्भावना करने को उत्प्रेक्षा अलंकार कहते हैं। यह सम्भावना जब कविवर द्वारा अपनी कवि प्रतिभा से उत्पन्न हो तो वहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार होता है।

काव्य के प्रथम सर्ग में शैलराज के उदार यश का वर्णन करते हुए कविवर लिखते हैं कि अपनी प्रियाओं के अधर पान से मस्त हुए भँवरे अपनी–अपनी इच्छानुसार लताओं और वृक्षों की शिखाओं पर विहार करते हुए, कानों को मुग्ध कर देने वाली गुञ्जार के द्वारा मानो इस शैलराज के यश का लगातार गान कर रहे हों।

भृंगाः प्रियाधरपरागनिपानमत्ताः,

स्वैरं लतातरुशिखासु विहारभाजः।

गायन्त्यनारतमुदारयशांसि नूनं,

कर्णामृतप्रतिझंकृतिभि र्हिमाद्रेः।।[10]

यहाँ उपमेय शैलराज की भ्रमर उपमान के साथ सम्भावना की गई है और पद्य में उत्प्रेक्षा बोधक शब्द 'नूनं' का भी प्रयोग किया गया है। अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

इसी प्रकार कविवर लिखते हैं कि हिमाचल के घने वनों में वर्षाकालीन बादलों की ध्वनि के पश्चात उत्कण्ठित मोरनियां मनोहर कोमल स्वरों में गाती हैं तो लगता है मानो हिमाचलसुता पार्वती की सखियां दक्षिण दिशा को गए जलधाराप्रिय शंकर को स्नान के लिए बुला रही हों।

मन्ये वने हृदयहारिवा मयूर्यः,

प्रावङ्घनध्वनिमनुस्वनयन्त्य उत्काः।

याम्यां गतं बहुजलप्रियपार्वतीशं,

सख्यो हिमाद्रिदुहितुर्नु निमन्त्रयन्ति।।[11]

यहाँ उपमेय (मोरनियों) के साथ उपमान (सखियों) की सम्भावना की गई है तथा उत्प्रेक्षा बोधक 'नूनम्' का प्रयोग भी किया गया है।

पञ्चम सर्ग में कवि भगवती काली अम्बा के चरित्र को चित्रित करते हुए लिखते हैं –

सा बालासुन्दरी शम्भुप्रसादाय तपोरता।

अम्बान्तिकमतिश्रान्ता विश्रामायेव संश्रिता।।[12]

यहाँ उपमेय भगवती काली अम्बा के साथ 'बाला सुन्दरी' उपमान की सम्भावना की गई है, साथ ही 'विश्रामायेव' पद में क्रिया के साथ 'इव' का प्रयोग हुआ है। अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

इसी प्रकार प्रो. शर्मा पञ्चम सग में लिखते हैं कि वनवास काल में अखरने वाले अकेलेपन को सहती हुई द्रौपदी को सखियों का सुख देने के लिए ही मानो पाण्डवों ने देवियों को उनके शाश्वत धाम से बुलाकर खुद बनाए मन्दिरों में बुलाया।

पाञ्चाल्यै वा सखीसौख्यं प्रदातुमिव पाण्डवाः।

देवीराहूय तदधाम्नो मन्दिरेषु न्यवासयन्।।[13]

यहाँ उपमेय द्रौपदी के साथ उपमान (देवियों) की सम्भावना की गई है। साथ ही 'प्रदातुमिव' पद में क्रिया के साथ 'इव' का प्रयोग किया गया है। इसी प्रकार –

शैलकोटिस्फुरद्रक्तपताका खलु कालिका।

अद्याप्यसुररक्तौघमुत्क्षिपन्तीव लक्ष्यते।।[14]

अर्थात् पर्वत की चोटियों पर लहराती हुई लाल पताकाओं को देखकर ऐसा लगता है मानो आज भी कालिका देवी युद्ध में मरते हुए राक्षसों के रक्त को ऊपर उछाल रही हो। यहाँ उपमेय 'लाल पताकाओं' में उपमान 'रक्त' की सम्भावना की गई है। साथ ही 'उत्क्षिपन्तीव' पद में क्रिया पद के साथ 'इव' का प्रयोग भी हुआ है।

4. रूपक अलंकार –

लक्षण – तद्रूपकमभेदो य उपमानोपमेययोः।[15]

अर्थात् जहाँ उपमान और उपमेय का अभेदारोप होता है, वहाँ रूपक अलंकार होता है। इस अलंकार में उपमेय उपमान का रूप धारण कर लेता है और दोनों एक जान पड़ते हैं।

महाकाव्य के प्रथम सर्ग में हिमाचल पर्वत की मधुर पवनों के प्रसंग में कहा गया है कि यह पर्वत शीतल और मनोहर गन्धसागर वाले मधुर पवनों से देवदारु के वृक्षों के घने शाखारूपी पंखों के द्वारा ऐसे संवाहित किया जाता है जैसे स्वर्ग की वारांगनाओं द्वारा देवराज इन्द्र।

शीतैर्निरन्तरमसौ मधुरै र्मरुद्भिः,देवद्रुसान्द्रविटपव्यञ्जनै र्नगेशः।

संबीज्यते रुचिरसौरभसारवृद्भिः,स्वर्लोकवारवनिताभिरिवामरेशः।।[16]

उपर्युक्त पद्य में 'विटपव्यजनैः' पद अर्थात् शाखारूपी पंख का प्रयोग हुआ है। यहाँ उपमेय (विटप) और उपमान (व्यंजन) में अभेदारोप किया गया है। अतः यहाँ रूपक अलंकार है। इसी प्रकार –

राज्ञामकबरादीनां दग्धुं दर्पतरुं ध्रुवम्।

आविष्कृताऽनलज्वाला विनेत्र्या वाऽभिमानिनाम्।।[17]

अर्थात् अकबर जैसे राजाओं के दर्परूपी तरु को भस्म करने के लिए ही मानो उद्दण्डों की नियन्त्री जगदम्बा ने अग्नि की ज्वाला को प्रकट किया। यहाँ 'दर्पतरु' पद का प्रयोग किया है। यहाँ दर्प (उपमेय) और तरु (उपमान) में अभेदारोप किया है। अतः उक्त पद्य में रूपक अलंकार है।

इसी प्रकार पञ्चम सर्ग का निम्न पद्य देखिए –

तृष्णादेवी स्थिता तेषां क्रूरमानसमन्दिरे।

सा पशो र्बलिमश्नाति दन्तव्याधार्पिता बत।।[18]

अर्थात् भ्रान्त लोगों के क्रूर मनरूपी मन्दिर मे तृष्णा देवी विराजमान है। वही दाँतरूपी हत्यारों द्वारा अर्पित पशु की बलि लेकर खाती है। यहाँ 'मानसमन्दिरे' तथा 'दन्तव्याध' पदों में उपमेय तथा उपमान में अभेदारोप किया गया है। अतः यहाँ रूपक अलंकार है।

5.भ्रान्तिमान् अलंकार –

लक्षण – भ्रान्तिमान् अन्यसंवित्तत्तुल्यदर्शने।[19]

अर्थात् जहाँ पर उसके समान वस्तु को देखने पर जो अन्य वस्तु का भान (प्रतीति) होती है, वह भ्रान्तिमान अलंकार होता है।

'हिमाचल वैभवम्' काव्य के प्रथम सर्ग में कविवर लिखते हैं कि नीले पर्वत के मध्य विचरण करने वाले धवल भेड़ों के झुण्डों को देखकर चातकगण बादलों के समूह समझ बैठते हैं तथा जल की अभिलाषा से आकाश को छोड़कर नीचे चल आते हैं –

नीलाद्रिमध्यविचरान् धवलवियूथान्।
मत्वाम्बुवाहनिकरान् गगनं विहाय।।[20]

यहाँ चातकगण धवल भेड़ों के झुण्डों को बादल समझकर जल की अभिलाषा से आकाश को छोड़कर नीचे चले आते हैं। वस्तुतः यह भ्रम कवि प्रतिभा से ही है। यहाँ उपमेय धवल भेड़ों का झुण्ड तथा उपमान बादलों का समूह है। यहाँ उपमेय में उपमान का भ्रम हो रहा है। अतः भ्रान्तिमान अलंकार है।

इसी प्रकार –

मत्वा पुमांसमितरं स्त्रियमत्र मत्तान्.पीत्वा सुरामरु परिष्वजतो हसन्त्यः।
भूयोऽपि मुग्धतरकिन्नरचारुनार्य, आपाययन्ति
मदविह्वलचञ्चलाक्ष्यः।।[21]

अर्थात् किन्नरगण अपने पुरुष साथियों को ही महिला समझकर गले लगा लेते हैं तथा मस्ती में उनकी उन चेष्टाओं पर खूब हँसती हुई कामासक्त किन्नर कामिनियाँ मदिरा का पान करवाती हैं। यहाँ उपमेय 'पुरुष किन्नर' में उपमान 'महिला किन्नरों' का भ्रम हो रहा है। अतः यहाँ भान्तिमान अलंकार है।

काव्य के प्रथम सर्ग में कविवर लिखते हें कि जब किन्नरों के समूह गम्भीर कण्ठ से गीत गाते हैं और उत्ताल तरंगों वाली पर्वतीय नदियों की ध्वनि उससे मिलती है तो उसे मोर बादलों की गर्जन समझकर अपने पंखों को फैलाकर बिना वर्षाकाल के ही नाचना प्रारम्भ कर देते हैं।

संयुक्तकिंपुरुषकण्ठगभीरगीतं, श्रुत्वा नदीस्वरविमिश्रमरण्यमध्ये।
मत्वा मयूरनिकरः स्तनितं घनानां, लास्यं ह्यसामयिकमारभतेऽग्रबर्हः।।[22]

यहाँ पर्वतीय नदियों की ध्वनि (उपमेय) में बादलों की गर्जन का (उपमान) का भ्रम हो रहा है। अतः भ्रान्तिमान अलंकार है।

काव्य के पञ्चम सर्ग में भगवती कालिका के चित्रण में कविवर लिखते हैं कि उस कपालिनी दुर्गा का मुख दैत्यों के रक्त से लाल है। यह सोचकर आज भी कुछ भ्रान्त लोग उसे बकरे की बलि चढ़ाते हैं।

दैतेयरक्तरक्तास्यां तां विचिन्त्य कपालिनीम्।
अद्याप्यजबलिं भ्रान्ताः केचनोपहरन्त्यहो।।[23]

यहाँ उपमेय में उपमान का भ्रम हो रहा है। अतः भ्रान्तिमान अलंकार है।

6. स्वभावोक्ति अलंकार –

लक्षण – स्वभावोक्तिर्दुरूहार्थस्वक्रियारूपवर्णनम्।[24]

अर्थात् जिसे दुरुह अर्थात् सूक्ष्म अथवा कल्पनाशील कविजन द्वारा संवेद्य, पदार्थों के स्वरूप किंवा उनकी क्रियाओं का वर्णन कहते हैं।

काव्य के प्रथम सर्ग में प्रो. शर्मा हिमाचल की भूमि की रमणीयता का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि यहाँ की भूमि कहीं पर पीले सरसों से भरपूर खेतों वाली, कहीं धवल जलनिर्झरों वाली तथा कहीं पर श्यामल देवदारु वृक्षों वाली अनेक रंगों से रंगी हुई है –

केदारकै र्बहुलसर्षपंक्तियुक्तैः, पीता क्वचिद् धवलिता जलनिर्झरैश्च।
श्यामा क्वचिद् वसुमतीह च देवदारु, द्यानै र्विभाति
बहुवर्णविशेषरम्याः।।[25]

यहाँ कविवर द्वारा हिमाचल प्रदेश की लहलहाती फसलों, झरनों व वृक्षों की स्वाभाविकता का चित्रण किया गया है। अतः स्वभावोक्ति अलंकार है।

इसी प्रकार कविवर हिमाचल प्रदेश में खिले पुष्पों की सुगन्ध से मनमोहक तरुओं को छूकर आने वाली मादक सुगन्ध से युक्त बहती हवाओं का वर्णन करते हुए लिखते हैं –

फुल्लप्रसूनभरचारुतरून् समन्तात्, स्पृष्ट्वा
निकाममभिरामसुगन्धवाताः।
व्याप्ता हिमाचलगिरौ मदमेदुरांगा, आलिंगयन्ति हरितां परितो वपूंषि।।[26]

यहाँ भी प्रो. शर्मा द्वारा मदमस्त सुगन्ध से युक्त बहती हवाओं का स्वाभाविक चित्रण किया गया है। अतः स्वभावोक्ति अलंकार है।

इसी प्रकार प्रथम सर्ग में ही कोमल पत्तों वाले झूलते हुए पके हुए फलों के भार से झुके हुए अखरोट के वृक्षों की स्वाभाविकता का चित्रण करते हुए लिखते हैं–

अक्षोटवृक्षविटपा मृदुगन्धिपत्रा, व्यालम्बिपक्वफलभारनता विभान्ति।
गोचारणाय चरतो गिरिगोपबालान्, उच्चैः प्रकूर्दनकलान्
परिलोभयन्तः।।[27]

इसी प्रकार –

शैल वसन्तसमये मृदुगन्धिवायौ, उद्यानपादपशिखासितसूनसंघाः।
शीतव्यपायपिशुनाः शिशिरर्तुमूर्ध्नि, वाधक्यशुक्लपलितैः सदृशा विभान्तिः।।

अर्थात् हिमाचल पर्वत पर वसन्त ऋत के आने पर जब भीनी मधुर गन्ध लिए पवन चलती है तो उद्यान के वृक्षों के शिखर पर खिले सफेद फूलों के गुच्छे शीत की समाप्ति के सूचक, शिशिर ऋतु के सिर पर वृद्धावस्था के सफेद बालों की तरह लगते हैं। यहाँ बसन्त ऋतु के आगमन की स्वाभाविकता का चित्रण किया गया है। अतः स्वभावोक्ति अलंकार है।

7. व्यतिरेक अलंकार –

लक्षण – उपमानाद् यदन्यस्य व्यतिरेकः स एव सः।।[28]

अर्थात् उपमान से उपमेय का जो व्यतिरेक (आधिक्य) बताया जाता है, वह व्यतिरेक अलंकार होता है। यहाँ अन्य का अर्थ उपमेय और व्यतिरेक का अर्थ आधिक्य है।

काव्य के अष्टम सर्ग में हिमाचल की नारियों के परिधान के चित्रण में कविवर लिखते हैं कि मनोहर ऊनी वस्त्रों से अलंकृत हिमाचल की सुन्दरियाँ स्वर्ग की अप्सराओं की कान्ति को भी फीका कर देती हैं–

कलान्वितै रर्पितचित्रचारुभि, र्मनोहरोर्णावसनैरलंकृताः।
हिमाद्रिनार्यो रजनीकरानना, विडम्बयन्त्यप्सरसो दिवौकसः।।[29]

उपर्युक्त पद्य में उपमान (स्वर्ग की अप्सराएँ) से उपमेय (हिमाचल की नारियाँ) की अधिकता बतलाई गई है। अतः यहाँ व्यतिरेक अलंकार है।

कविवर पुनः लिखते हैं कि हिमपर्वत की सुन्दरियों की रमणीयता को मापने के लिए कोई भी मानदण्ड समर्थ नहीं है क्योंकि वे अपने मुखों से चन्द्रमा की, नयनों से कमलों की, मधुर ओठों से लताओं के पत्रों की, वाणी से कोयलों की, चरणों की भंगिमाओं से हरिणियों की, स्तनों से उन्नत टीलों की ओर मनोहर नृत्यों से मोरनियों की छटा को फीका कर देती हैं।

मुखैः सुधांशो र्नयनैः सुरोभुवां, लताच्छदानां मधुराधरैश्छविम्।
गिरां तिरश्चां चिकुरै र्महीरुहां, मृगांगनानां गमनेऽध्रिभंगिभिः।।[30]
पयोधरैरुन्नतपीनभूभृतां, शिखावलानामभिरामनर्तनैः।
विडम्बिनीनां तुहिनाद्रियोषितां, विराजते मानमतीत्य चारुता।।[31]

उपर्युक्त पद्यों में उपमेय (हिमाचल की सुन्दरियों की रमणीयता) को उपमानों (चन्द्रमा, कमलों, लताओं, कोयलों, हरिणियों, टीलों और मोरनियों) से व्यतिरेक बताया गया है। अतः यहाँ व्यतिरेक अलंकार है। इसी प्रकार प्रथम सर्ग में कविवर हिमाचल की शोभा के वर्णन में लिखते हैं कि यहाँ वायु के द्वारा कम्पाए हुए पेड़ों के पत्तों का झूमझूम कर काम्पना स्वर्ग की नृत्यांगनाओं के नृत्य को भी मात करता है तथा पक्षियों की चोंचों के पुरों से निकली गीतिकाएँ गन्धर्वों के गायन के गर्व को हर देती हैं–

वातेरितद्रुमपलाशविलासलीला, भंगि विडम्बयति निर्जरनर्तकीनाम्।
शाकुन्तचञ्चुपुटनिर्गतगीतिकाभि, गन्धिर्वगर्वहरणं क्रियतेऽथ
नित्यम्।।[32]

उपर्युक्त पद्य में वृक्षों के पत्तों का झूमझूम कर काम्पना (उपमेय) को स्वर्ग की नृत्यांगनाओं के नृत्य (उपमान) से आधिक्य वर्णित किया गया है। इसी प्रकार पक्षियों की चोंचों के पुटों से निकली गीतिकाओं (उपमेय) को गन्धर्वों के गायन (उपमान) से आधिक्य वर्णित किया गया है। अतः यहाँ व्यतिरेक अलंकार है।

8. अर्थान्तरन्यास अलंकार –

लक्षण – सामान्यं वा विशेषो वा तदन्येन समर्थ्यते।
यत्तु साऽर्थान्तरन्यासः साधर्म्येण परेण वा।।[33]

अर्थात् जहाँ सामान्य से विशेष का और विशेष से सामान्य का समर्थन किया जाता है, वहाँ अर्थान्तरन्यास अलंकार होता है।

'हिमाचल वैभवम्' काव्य के प्रथम सर्ग में प्रो. शर्मा हिमाचल के शिलाखण्डों के वर्णन प्रसंगों में लिखते हैं कि पर्वत के पार्श्वखण्ड जो कि बादलों, झरनों और तूफानो की गर्जना के उत्तर में स्वयं भी गम्भीर ध्वनि करते हैं (विशेष कथन)। तेजस्वियों का स्वाभाविक गुण प्रशंसा के योग्य है कि वे बराबर के प्रतिद्वन्द्वी की तेजस्विता को सहन नहीं करते (सामान्य कथन) –

नादान् हि नीरधरनिर्झरवातजातान्,
खण्डा गिरेरतिगभीरमनुध्वनन्ति।
तेजस्विनां जयति कोऽपि निसर्गधर्मः,
तेजस्वितां प्रतिभटस्य न ये सहन्ते।।[34]

इसी प्रकार द्वितीय सर्ग में जमदग्नि ऋषि की भार्या रेणुका के प्रसंग में कविवर लिखते हैं कि यद्यपि रेणुका पतिपरायणा थी, किन्तु नर्मदा नदी से जल लाने के समय वह अपना समय गन्धर्वराज को देखने में व्यतीत कर देती है, जिसके चलते पति की धर्मक्रिया का समय निकल जाता है। इस अपराध का प्रतिफल उन्हें भोगना भी पड़ा था। कविवर कहते हैं कि कहाँ तो रेणुका का नयनापराध, जो पाप का कारण था और कहाँ उन्हीं के नाम पर बना समस्त पापों का नाशक विशाल तालाब, जिसमें श्रद्धालुजन स्नान करके अपने पापों की निवृत्ति पाते हैं (विशेष कथन)। इसका सामान्य कथन (वस्तुतः सच्चरित्र से पवित्र कुलांगनाओं का अनवद्यानता जनित दोष भी एकान्ततः दोष नहीं होता) से समर्थन किया गया है –

क्व पापहेतु र्नयनापराधः, तस्याः क्व पापघ्नसरोवरो वा।
नैकान्ततां याति कुलांगनानां, दोषोऽपि चारित्र्यपवित्रितानाम्।।[35]

इसी प्रकार कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य हैं –

ज्वालपाप्यौष्ण्यमुत्सृष्टं शीतलानिकटस्थया।
निसर्गोऽपि निवर्तेत प्रत्यासत्त्या प्रियस्य वा।।[36]

अर्थात् शीतला भगवती के निकट रहने के कारण ज्वाला जगदम्बा ने भी अपनी उष्णता का परित्याग कर दिया (विशेष कथन) प्रिय के साथ रहने के कारण, रहने वाला का स्वभाव भी बदल जाता है (सामान्य कथन)।

इसी प्रकार –

क्वचित् सुरामांसनिषेविणो जना, निजेच्छया शैत्यजिगीषयाऽथवा।
भवन्तु कामं न हि तरुपद्रवो, न गण्यते भूरिगुणेऽल्पदूषणम्।।[37]

एक अन्य उदाहरण –

हरौ प्रयाते शयनाय देवता, विहाय भूमिं प्रतियान्ति वा दिवम्।
समुत्थिते प्रत्युपयान्ति चावनिं, शुभावहा स्वाम्यनुवर्तिता सताम्।।[38]

9. उपमा अलंकार –

लक्षण – साम्यं वाच्यमवैधर्म्यं वाक्यैक्य उपमा द्वयोः।।[39]

अर्थात् जहाँ उपमान और उपमेय रूप दो पदार्थों का एक वाक्य में सादृश्य हो और वैधर्म्य का कथन न हो, वहाँ उपमा अलंकार होता है।

'हिमाचल वैभवम्' काव्य के प्रथम सर्ग में ग्रीष्म ऋतु के प्रसंग में कविवर लिखते हैं कि ग्रीष्मकालिक सूर्य की प्रचण्ड किरणों से सन्तप्त लोग तापशान्ति के लिए तापनाशक ईश्वर की तरह हिमाचल के पर्वतों का आश्रय लेते हैं –

ग्रीष्मार्कचण्डकिरणैः परितप्तगात्रा, नान्यत्र दुस्तपनशान्तिमवाप्नुवन्तः।
लोकाः सुशीतलपयः पवनोपलब्ध्यै, तापच्छिदं हरिमिवेनमुपाश्रयन्ते।।[40]

उपर्युक्त पद्य में तापनाशक हिमाचल उपमेय और तापनाशक ईश्वर उपमान है।

यहाँ उपमान और उपमेय रूप दो का एक वाक्य में सादृश्य है। अतः उपमा अलंकार है। इसमें आश्रयन्ते साधारण धर्म है।

इसी प्रकार –

शैले वसन्तसमये मृदुगन्धिवायौ, उद्यानपादशिखासितसूनसंघाः।
शीतव्यपायपिशुना शिशिरर्तुमूर्ध्नि, वार्धक्यशुक्लपलितैः सदृशा विभान्ति।।[41]

अर्थात् हिमाचल के पर्वतों पर वसन्त ऋतु के आने से जब भीनी मधुर सुगन्ध लिए पवन चलती है तो उद्यान के वृक्षों के शिखर पर खिले सफेद फूलों के गुच्छे शीत की समाप्ति के सूचक, शिशिर ऋतु के सिर पर वृद्धावस्था के सफेद बालों की तरह लगते हैं। यहाँ सफेद फूलों के गुच्छे (उपमेय) और वृद्धावस्था के सफेद बालों (उपमान) का एक वाक्य में सादृश्य कथन किया गया है। अतः उपमा अलंकार है। विभान्ति साधारण धर्म है।

10. उदात्त अलंकार –

लक्षण – उदात्तं वस्तुनः सम्पत्। महत्तां चोपलक्षणम्।।[42]

अर्थात् जहाँ पर वर्णनीय अर्थ में उदार–चरितों का वर्णन किया जाता है।

कविवर शर्मा द्वितीय सर्ग में भगवान् शिव और पर्वतराज हिमाचल के महान् गुणों का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि इन दोनों ने शान्ति और कल्याण के अपने दोनों गुण हिमाचल के समाज को अर्पित किये हैं जो यहाँ अपने सम्पूर्ण वैभव के साथ शाश्वत रूप में विद्यमान हैं –

शमं हिमाद्रिर्मदनारयेऽदात्, प्रत्यार्पयच्छर्म शिवो नगाय।
उभावुभं वा ददतु र्जनेभ्यः, स्वाभाविकः सत्सु परोपकारः।।[43]

यहाँ भगवान् शिव और पर्वतराज हिमाचल का महनीय किंवा उदात्त चरित वर्णित है। अतः यहाँ उदात्त अलंकार है।

इसी प्रकार द्वितीय सर्ग में कविवर मनु महाराज के उदात्त चरित्र का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि मनु महाराज के उत्पादन, उन्हें कर्म मार्ग का धर्मोपदेश, वर्णाश्रम धर्म का विभाग तथा अध्यात्म विद्या का प्रचुर–प्रचार करने से संसार में आदर्श पिता का उत्कृष्ट गौरव प्रदर्शित किया –

उत्पादनाद् धर्मपथोपदेशाद्, वर्णाश्रमाणामथ संविभागात्।
यश्चात्मविद्याप्रचुरप्रचारात्, पितृप्रकर्षं प्रददर्श सुष्ठु।।[44]

यहाँ मनु महाराज के उदात्त चरित्र को वर्णित किया गया है। अतः उदात्त अलंकार है।

इसी प्रकार तृतीय सर्ग में कविवर सिद्धविद्या वाले शुकदेव मुनि के चरित्र का चित्रण करते हुए लिखते हैं कि इस शुकदेव मुनि का सोलह वर्ष की आयु में ही बड़े–बड़े ऋषिजन ने गंगातट पर उठकर आदर सत्कार किया था तथा उनकी भागवत पुराण की व्याख्या वाली मृदु वाणी को सुनने के लिए देवताओं ने स्वर्ग से लाए हुए अमृत का उपहार भेंट किया था –

यः षोडशाब्दायुषि सिद्धविद्य, उत्थाय वृद्धर्षिभिरप्यपूजि।
यदीयवाणीश्रवणाय दत्तो, वृन्दारकैः स्वर्गसुधोपहारः।।[45]

यहाँ सिद्धविद्या में निपुण शुकदेव मुनि के उदात्त चरित्त को चित्रित किया गया है। अतः यहाँ उदात्त अलंकार है।

11. स्मरण अलंकार –

लक्षण – यथानुभवमर्थस्य दृष्टेः तत्सदृशे स्मृतिः स्मरणम्।[46]

अर्थात् उसके समान वस्तु देखने पर पूर्वानुभूत वस्तु की स्मृति होना स्मरण अलंकार है।

'हिमाचल वैभवम्' काव्य के पञ्चम सर्ग में कविवर लिखते हैं कि हिमाचल में दुर्गा के लिए लाल ध्वजाएँ भेंट की जाती हैं। लाल वस्त्र से राक्षसों के लाल रक्त की स्मृति श्रद्धालुओं को हो जाती है। इसलिए वे करुणा और स्नेह से ओत–प्रोत और श्रद्धाभावयुक्त होकर दुर्गा को लाल ध्वजाएँ चढ़ाते हैं –

शताक्षी करुणास्निग्धा रक्षोनाशं न विस्मरेत्।
इतीवास्यै ध्वजव्याजाद् रक्तवासः प्रदीयते।।[47]

यहाँ लाल ध्वजा को देखकर क्रूर राक्षसों के रक्त की स्मृति श्रद्धालुओं को हो जाती है। अतः यहाँ स्मरण अलंकार है।

इसी प्रकार सप्तम सर्ग में कविवर लिखते हैं कि हिमाचलवासी पाण्डवों के द्वारा निर्मित सुन्दर कूपों और देवाल्यों को देखकर पाण्डवों को याद करते हैं। कुछ विशिष्ट लोग तो अपने में पाण्डवों की दिव्य चमत्कार वाली कला भी धारण करते हैं–

अद्यापीह जनाः स्मरन्ति विपुलश्रद्धान्विताः पाण्डवान्।
दर्शं दर्शमतीव सुन्दरसरोदेवालयान् तत्कृतान्।।
केचिद् ग्रामजनास्तु पाण्डवकलां दिव्यां दधत्यात्मनि,

या नानावसरेषु तेषु सहसाऽऽविर्भावमागच्छति।।[48]

यहाँ हिमाचलवासियों को पाण्डवों द्वारा बनाए गए रम्य कूपों और देवालयों को देखकर पाण्डवों की याद आ रही है। अतः यहाँ स्मरण अलंकार है।

12. विभावना अलंकार –

लक्षण – विभावना विना हेतुं कार्योत्पत्तिर्यदुच्यते।।[49]

अर्थात् जहाँ कारण का अभाव होने पर भी कार्य हो, वहाँ विभावना अलंकार होता है।

'हिमाचल वैभवम्' काव्य के तृतीय सर्ग में कविवर लिखते हैं कि विभाण्डक ऋषि के पुत्र ऋष्यशृंग ने लम्बे समय तक हिमाचल के कुल्लू पर्वत पर तप किया था जो अत्यन्त निर्मल प्रकृति के थे। राजा रोमपाद द्वारा भेजी गई वारांगनाओं द्वारा भेट किये गये लड्डुओं को भी उन्होंने मीठे लड्डू समझा तथा सुन्दरियों द्वारा गाढ़ आलिंगन करने पर भी कामदेव उन्हें हिला नहीं सका।

वारांगनाभ्यर्पिततमोदकानि, योऽमन्यत स्वादुफलानि शैले।
आलिंगितः स्त्रीभिरपि प्रकामं, न चाभवत्कामविकारवश्यः।।[50]

यहाँ सुन्दरियों द्वारा गाढ़ आलिंगन रूप कारण के होने पर भी कामभाव रूप कार्य का न होना बताया गया है। अतः यहाँ विभावना अलंकार है।

इसी प्रकार पञ्चम सर्ग का निम्न पद्य द्रष्टव्य है –

को दुर्गास्नेहसमतां कुर्याद्यच्चक्षुरुद्गतैः।
करुणाश्रुप्रपातौघैरनावृष्टिर्निवारिता।।[51]

अर्थात् यहाँ दुर्गा माता के नेत्रों से निकले करुणापूर्ण आँसुओं के झरनों से संसार की अनावृष्टि का दूर होना बताया गया है। यहाँ अपर्याप्त कारण से कार्य की उत्पत्ति कल्पित की गई है। वस्तुतः जो जिसका कारण नहीं है, उससे कार्य की उत्पत्ति का होना सम्भव नहीं है, इसलिए यहाँ विभावना अलंकार है।

इसी प्रकार –

श्यामलैः सुरदारुणां निकरैः परिवारिता।
श्यामलाऽभूत् क्व वा नैव प्रत्यासन्ति र्गुणार्पिणी।।[52]

अर्थात् कविवर कहते हैं कि शिमला में सांवले निर्मल देवदारु वृक्षों के घने झुण्डों द्वारा आवृत्त होने के कारण भगवती माता भी श्यामला हो गई। यहाँ अपर्याप्त कारण से कार्य की उत्पत्ति कवि प्रतिभा द्वारा कल्पित की गई है। अतः यहाँ भी विभावना अलंकार है।

निष्कर्ष –

इस प्रकार प्रो. केशवराम शर्मा विरचित 'हिमाचल वैभवम्' कृति में अनेकविध अलंकारों का प्रयोग पदे–पदे द्रष्टव्य है, जिससे कवितारूपी कामिनी के सौन्दर्यश्री में वृद्धि हुई है। कविवर का सर्वाधिक प्रिय अलंकार उत्प्रेक्षा अलंकार है यद्यपि उन्होंने उपमा, अनुप्रास, यमक, दृष्टान्त, व्यतिरेक, विभावना, विशेषोक्ति, स्वभावोक्ति जैसे अनेक अलंकारों से भी अपनी कृति को सुसज्जित किया है। कविवर ने अपनी कृति में अलंकारों का प्रयोग वर्ण्य विषय में अनायास ही किया है, जिसके चलते कृति कहीं भी अलंकारों के बोझ से बोझिल नहीं लगती है। इनक द्वारा प्रस्तुत वर्ण्य–विषय में सजीवता, सुन्दरता और अभिव्यक्तिगत कलात्मकता में श्रीवृद्धि हुई है, जिससे कृति का वस्तुविधान अधिकाधिक सरस और कान्तिमय बन पड़ा है। मैं तो यही कहना चाहूँगा कि काव्य में प्रयुक्त अलंकार कवि की वाणी का ही अनुसरण करते हुए परिलक्षित हो रहे हैं। वस्तुतः कृति में आए अलंकार भाषा व भावानुरूप ही हैं। भावों की अभिव्यक्ति को प्राञ्जल व प्रभावशाली बनाने में अलंकारों ने महती भूमिका अदा की है। विस्तारभय से अनेक अलंकारों का मैं स्पर्श तक नहीं कर पाया हूँ। प्रो. शर्मा ने उक्त कृति में वैदिक संस्कृति से हटते जा रहे युवावर्ग को पुनः वैदिक संस्कृति की ओर लौटने का सफल सन्देश दिया है। काव्य में गुरु गोविन्द सिंह जैसे महापुरुषों व पराशर, वशिष्ठ, जमदग्नि व परशुराम जैसे ऋषियों व तपस्वियों के उदात्त चरित्रों को प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। अन्ततः मैं यही कहना चाहता हूँ कि प्रो. शर्मा द्वारा रचित काव्यरूपी उपवन में अलंकार पुष्पगुच्छ के समान सर्वत्र अभिलसित हो रहे हैं।

REFERENCES

1. 'हिमाचल वैभवम्' 1/344
2. काव्यप्रकाश 8.67
3. साहित्यदर्पण 10.3
4. 'हिमाचल वैभवम्' 1.56
5. 'हिमाचल वैभवम्' 1.65
6. 'हिमाचल वैभवम्' 4.54
7. साहित्यदर्पण 10.8
8. 'हिमाचल वैभवम्' 4.36
9. काव्यप्रकाश 10.92
10. 'हिमाचल वैभवम्' 1.16
11. 'हिमाचल वैभवम्' 1.47
12. 'हिमाचल वैभवम्' 5.34
13. 'हिमाचल वैभवम्' 5.47
14. 'हिमाचल वैभवम्' 5.18
15. काव्यप्रकाश 10.83
16. 'हिमाचल वैभवम्' 1.4
17. 'हिमाचल वैभवम्' 4.46
18. 'हिमाचल वैभवम्' 5.20
19. काव्यप्रकाश 10.132
20. 'हिमाचल वैभवम्' 1.42
21. 'हिमाचल वैभवम्' 1.43
22. 'हिमाचल वैभवम्' 1.46
23. 'हिमाचल वैभवम्' 5.19
24. साहित्यदर्पण 10.92
25. 'हिमाचल वैभवम्' 1.9
26. 'हिमाचल वैभवम्' 1.12
27. 'हिमाचल वैभवम्' 1.36
28. काव्यप्रकाश 10. सू. 159
29. 'हिमाचल वैभवम्' 8.28
30. 'हिमाचल वैभवम्' 8.29
31. 'हिमाचल वैभवम्' 8.30
32. 'हिमाचल वैभवम्' 1.26
33. काव्यप्रकाश 10.109
34. 'हिमाचल वैभवम्' 1.32
35. 'हिमाचल वैभवम्' 2.34
36. 'हिमाचल वैभवम्' 4.51
37. 'हिमाचल वैभवम्' 8.53

38. 'हिमाचल वैभवम्' 8.55
39. साहित्यदर्पण 10.14
40. 'हिमाचल वैभवम्' 1.11
41. 'हिमाचल वैभवम्' 1.37
42. काव्यप्रकाश 10.115
43. 'हिमाचल वैभवम्' 2.7
44. 'हिमाचल वैभवम्' 2.45
45. 'हिमाचल वैभवम्' 3.9
46. काव्यप्रकाश 10. सू. 199
47. 'हिमाचल वैभवम्' 5.17
48. 'हिमाचल वैभवम्' 7.12
49. साहित्यदर्पण 10.66
50. 'हिमाचल वैभवम्' 3.44
51. 'हिमाचल वैभवम्' 5.15
52. 'हिमाचल वैभवम्' 5.35